© 2017 IJSRSET | Volume 3 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099

नाथयोग : दर्शन

डॉ0 दानपाल सिंह
0177A काजीपुरखुर्द,
गोरखपुर, उ0प्र0।

नाथतत्त्वदर्शन : परमार्थिक रूप से दृश्यमानप्रपञ्च का – ब्रह्माण्ड और पिण्डों का – कोई अस्तित्त्व नहीं है। वस्तुतः न तो जगत की उत्पत्ती होती है न ही इसका विनाश होता है क्योंकि परसंवित् रूप परमतत्त्व कार्य–कारण–कर्तृत्व आदि से शून्य, कुल–अकुल संज्ञा से भी परे, सर्वथा अव्यक्त, निरपेक्ष, निरंजन, स्वयं और एक एवाद्वितीय रूप में रहता है समाधि दशा में अनुभवैकगम्य अव्यक्त, अवांङ्मनसगोचर इस परमतत्त्व को किसी देशकाल और भाषा की सीमा में नहीं बांधा जा सकता अतः यह वस्तुतः अनिर्वाच्य है।[1] इसका स्वरूप–निरूपण करते हुये कहा गया है कि–[2]

न ब्रह्मा विष्णुरूद्रौ न सुरपतिसुराः नैव पृथ्वी न चापों,
नै वागनिर्नापि वायुर्न च गगनतलं नो दिशो नैव कालः।
नो वेदाः नैव यज्ञाः न च रविशशिनौ नो विधिर्नैव कल्पाः,
स्वज्योतिः सत्यमेकं जयतितवपदं सच्चिदानन्दमूर्ते।।

अर्थात् न तो वहाँ ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र, इन्द्र तथा अन्य देताओं का कोई पृथ्क अस्तित्व है और न पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश का ही कोई चिह्न है और न काल और दिशाओं की कोई स्थिति है। वेद, यज्ञ, सूर्य, चन्द्र नियम और संसारचक्र आदि भी वहाँ अनुपस्थित है। वहाँ तुम स्वयं को हे सच्चिदानन्दमूर्ति परमात्मा स्वयं को पूर्णशुद्ध स्वयं रूप में प्रकट करते हो। वहाँ केवल तुम्हारा आत्म रूप एकमेवाद्वितीय रूप में आत्मप्रकाश युक्त चरम सत्ता के रूप में विद्यमान है।

गोरखवाणी में नाथ जी ने किसी परमतत्त्व को न बस्ती है न शून्य है, न शून्य है न बस्ती है। गगन शिखर में एक बालक बोल रहा है उसका नाम कोई कैसे दे सकता है[3] तथा हठयोग प्रदीपिका में भी यही ध्वनि –'शून्याशून्यविलक्षण स्फुरति तत् तत्वं परं सम्भवम्' के द्वारा प्रकट की गयी है और 'अमनस्कयोग' में भी परम तत्व का ब्रह्म संज्ञा से ऐसा ही स्वरूप निरूपण करते हुये उसे भाव–अभाव से विनिर्मुक्त, नाश और उत्पत्ति से विवर्जित तथा सर्वसंकल्पनातीत पर तत्त्व कहा गया है।[4]

अस्तु यद्यपि परासंवित्, परमतत्त्व, परमब्रह्म, अलखनिरंजन परम शिव का ऐसा ही विलक्षण पारमर्थिक स्परूप है तथापि लोक व्यवहार की दृष्टि से नाथ्झ पंथ की परम्परा के अनुसार उस परमतत्त्व से अब्रह्म–स्तम्बपर्यन्त प्रपंचात्मक विकास का विचार किया जाता है क्योंकि उस वस्तुतः अनिर्वचनीय विलक्षण और अद्वय परम सत्ता की ऐसी नामरूपहीन व्याख्या सहजबोधगम्य नहीं है और व्यवहार में इसे बोधगम्य बनाने के लिये किसी सोपाधिक रूप में ही कहने की विवशता है। इसलिये ऐसी व्यावहारिक बाध्यता के कारण अत्याख्येय परमसत्ता की भी व्याख्या की जा रही है।[5] तद्नुसार जब 'आनीदवातं स्वधया तदेकम्' रूप में न कुल[6] (शिव) था न अकुल[7] (शक्ति) था तब उस समय वह परब्रह्म ही अव्यक्त रूप में होने के कारण नाम रूप विहीन अनामा था।[8] अनामा इसलिये कि वह परमतत्त्व अनादिसिद्ध एक और अनन्त है – सत्, असत्, और न सत्, न असत् विविध कोटियों से विलक्षण होने के कारण सिद्धों–नाथयोगियों–के सिद्धान्त में ऐसा ही है।[9] 'एकोऽहं बहुस्याम' की तरह ही जब इस परमतत्त्व – परमशिव – में सिसृक्षा अर्थात् सृष्टि करने की इच्छा मात्र अंकुरित हुयी तब इससे इच्छामात्रधर्मा 'निजाशक्ति' बीज में अंकुर के समान उत्पन्न हुयी।[10] सह 'निजी' इसलिये है कि यह परमतत्त्व–परमशिव– में सदा निहित एवं एकाकार रहती है और उसकी स्वरूपभूता है अर्थात् उससे भिन्न कुछ नही है।[11] परमशिव में अन्तर्निहित उक्त सिसृक्षा के उन्मुख होने मात्र से उससे 'पराशक्ति', तने से डाल की तरह, उत्पन्न हुयी[12] और 'निजा' इसलिए है कि यह परमतत्त्व–परमशिव– में सदा निहित एवं एकाकार रहती है और उसकी स्वरूपभूता है अर्थात् उससे भिन्न कुछ नहीं है।[13] परमशिव में अन्तर्निहित उक्त सिसृक्षा के उन्मुख होने मात्र से उससे 'पराशक्ति', तने से डाल की तरह, उत्पन्न हुई[14] और फिर 'परशक्ति' के स्पंद–सक्रियतामात्र– से 'अपराशक्ति' ठीक वैसे ही प्रकट हुयी जैसे शाखा से प्रतिशाखा उत्पन्न होती है।[15] तदनन्तर इस 'अपराशक्ति' से अहन्तामात्र रूप से 'सूक्ष्माशक्ति' उद्गत हुयी।[16] फिर उससे वेदनशील – स्परूपज्ञानकारिणीभूता – 'कुण्डलिनी–शक्ति' विकसित हुयी।[17] उपर्युक्त निजा, परा, अपरा, सूक्ष्म और कुण्डलिनी नामक शक्ति–पञ्चक से 'परपिण्ड' की उत्पत्ति से कारण। इनमें अर्थात् शक्तिपञ्चकों में प्रथम निजाशक्ति के नित्यता, निरन्जनता, निस्पन्दता, निराभासता और निरूत्थानता नामक पाँच गुण बताये गये है।[18] इसी प्रकार शेष परा, अपरा, सूक्ष्मा और कुण्डलिनी शक्तियों के भी क्रमशः पाँच–पाँच गुण है – अस्तिता, अप्रमेयता, अभिननता, अनन्तता और अव्यक्तता (परा के पाँच गुण): स्फुरता, स्फुटता, स्फोटता और स्फूर्तिता (अपरा के पाँच गुण) : निरंशता, निरंतरता, निश्चलता, निश्चयता और निर्विकल्पता (सूक्ष्मा के पाँच गुण) : पूर्णता, प्रतिबिम्ता, प्रबलता, प्रोच्चलता और प्रत्यङ्मुखता (कुण्डलिनी शक्ति के पाँच गुण)। इस प्रकार शक्ति तत्त्व से पाँच–पाँच

गुणों के योग से परपिण्ड की उत्पत्ति हुई।[19] जैसे कि अन्यत्र भी कहा गया है कि – परमशिव की सिसृक्षा के विकासक्रम में निजापरा, अपरा, सूरक्षा और कुण्डलिनीरूप पाँचप्रकारक शक्तिचक्र–क्रम से परपिण्ड 'शिव' की उत्पत्ति हुई।[20] अब यदि उपर्युक्त निजा आदि शक्तियों के स्परूप पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि निजा परमशिव में अन्तर्निहित इच्छामात्रधर्मा स्वरूपभूता शिवतत्त्व ही है। इस प्रतिमावस्था के नित्यता आदि जो पाँच गुण बताये गये है इनमें नित्यता का अर्थ शाश्वतता अर्थात इस शक्ति का शिव में सदा अभिन्न रूप से उपस्थित रहना है। निरंजनता का अर्थ विशुद्धता है। निस्पंदता का अर्थ यह है कि अभी शक्ति के मूल स्वरूप में आन्तरिक परिवर्तन की सक्रियअंतःप्रेरणा नही है और वह पूर्ण शान्त गम्भीर स्थिति में शिव में प्रगाढ़ निद्रा में मग्न है। उपर्युक्त गुणों में जहाँ निराभासता से आशय यह है कि शक्ति का अभी शिव से भिन्न अस्तित्व नहीं है तथा शिव का स्वरूप उस पर प्रतिबिम्बित नहीं हो रहा है वही निरूत्थानता का अर्थ यह है कि वह अभी शिव के पारमार्थिक स्वरूप से भिन्न और जागृत नहीं हुई है। इस अवस्था में शिव शाक्ति हैं तथा शाक्ति शिव है यह परमतत्त्व का परासंवित रूप है। जब शिव में अव्यक्त रूप में विद्यमान निजाशक्ति से सिसृक्षा के क्रम में शिव के स्वरूप के अन्तर्गत एक स्पष्ट अंग के रूप में किंचित व्यक्त होने लगती है तब इस स्तर पर इसे पराशक्ति कहा जाता है। इसीलिये इसे उनमुख्त्व मात्र संज्ञा से अभिहित किया गया है। वस्तुतः यह शिव की निजाशक्ति का प्रथम सूक्ष्म उद्घाटन है। निरूत्थान दशा से शक्ति की यह पहली उत्थान दशा है। इसके अस्तिता आदि जो पाँच गुण बताये गये है। उनमें अस्तिता से आशय यह है कि आत्मप्रकटीकरण के पूर्व पराशक्ति निजाशक्ति की भाँति शिव से पूर्णतदाकार थी। इसका दूसरा गुण अप्रमेयत्व इस बात का द्योतक है कि समस्त प्रापंचिक नियमों, कालदिक आदि की व्यवस्था की जननी होने से उसके स्वभाव की थाह नहीं पायी जा सकती। तीसरा गुण अभिन्नता इस तथ्य का व्यंजक है कि उसके अन्दा या बाहर कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिससे यह एक स्वतन्त्र इकाई के रूप में पृथक ठहरायी जा सके। चौथा गुण अनन्तता इस शक्ति की असीमता का वाचक है। यद्यपि यह अभी शिव के पारिमार्थिक स्वरूप से अभिनन है तथापि स्वयं में काल–दिक् आदि अनन्त व्यावहारिक अभिव्यक्तियों का अक्ष्य भण्डार धारण किये रहती है। इसके पाँचवें गुण अव्यक्तता से यह व्यक्त होता है कि शक्ति का अनन्त भण्डार जो शाश्वत रूप में उसमें उपस्थित है अभी पूर्णतया अभिव्यक्त नहीं हुआ है। तीसरे स्तर पर परशक्ति के अनन्त परामार्थिक अन्तःकरण में किसी प्रकार का स्पन्दन अथवा आन्तरिक हलचल हुई जिसे अपराशक्ति कहा गया है। इसके स्फूरता आदि जो पाँच गुण बताये गये हैं। इनका निरूपण सूक्ष्मता के कारण कठिन है। स्फूरता का अर्थ है कि शक्ति अब की चेतना के समक्ष आधिक व्यक्त रूप में है। स्फारता और स्फुटता इसके आगे की स्थितियाँ है और स्फुटता तथा स्फोटता क्रमशः अपने आन्तरिक महिमाओं को वयावहारिक स्तर पर शैनः–शनैः प्रकट करने का बोधक है। अभिव्यक्ति की

चतुर्थ अवस्था में शिव की सक्रिय वेतना में एक शुद्ध अहम् का भाव प्रकट होता ळै। इसे ही सूक्ष्माशक्ति कहा गया है। इस स्थिति में भी शिव एक और अद्वितीय है यद्यपि वे एक सगुण ईश्वर का रूप धारण कर लेते है तथापि अभी तक उनकी आत्मचेतना में कोई भेद या सापेक्ष्यता नहीं है इसके निरंशता आदि पाँच गुण बताये गये है उनमें निरंशता का तात्पर्य द्वैत या अनेकता या सापेक्षिकता न होना है, निरंतरता का तात्पर्य अहम चेतना में कोई क्रम भंग या व्यवधान न होना है, निश्चलता से तात्पर्य चेतना के इस स्तर पर प्रसार या संकोच का न होना है, निश्चयता का अर्थ अनिश्चितता का न होना तथा निर्विकल्पता का अर्थ शुद्ध सर्वज्ञता है। शक्ति की पाँचवी अवस्था कुण्डलिनी में शिव के आत्मचेतन व्यक्तित्व में एक विशिष्ट मानसिक शक्ति का रूप ज्ञान, अनुभव तथा इच्छा की प्रक्रियायें उत्पन्न करने के लिये उनके विषयों के उद्भव के पूर्व ही धारण कर लेती है। इसके पूर्णता आदि जो पाँच गुण बताये गये है उनमें पूर्णता आदि जो पाँच गुण बताये गये है उनमें पूर्णता न्यूनभावविहीनता और सर्वश्रेय उद्बोधकता को प्रकट करती है। प्रतिबिम्बिता का अर्थ है कि शक्ति की यह स्थिति एक दर्पण है जिस पर शिव के पारमार्थिक स्वरूप का, भौतिक–जैविक–मानसिक–बौद्धिक नानारूपों में प्रतिबिम्ब पड़ता है। प्रबलता का अर्थ है सर्वशक्तिमत्ता, प्रोच्चलता का अर्थ किसी ने सदा ऊर्ध्वगामिता बताया है[21] तो किसी ने इस आत्मरूपान्तरण, आत्मप्रसारण, आत्मगुणनन और साथ ही आत्मसमायोजन का छिपा हुआ गुण कहा है।[22] वेदनशीला कुण्डलिनी का प्रत्सङ्गमुखता नामक गुण का अर्थ है कि संसार का सृजन, पालन और संहार करते हुये भी सर्वदा उसका मुख परमात्मा शिव की ओर ही रहता है।

इस प्रकार परपिण्ड शिव की कारणीभूत शक्तिपंचक को बताकर अनादि अकारणपिण्ड का भी पाँच कारण बताया गया है जो इस प्रकार है– अपंपर, परंपद शून्य निरंजन और परमात्मा।[23] इनमें अपरंपर से स्फुरता मात्र परंपद से भावना मात्र शून्य से सत्ता मात्र निरंजन से साक्षात्कार मात्र और परमात्मा से परमात्मा की उत्पत्ति कही गया है[24] तथा इनमें से प्रत्येक की क्रमशः पाँच–पाँच गुण– अकलंकत्व, अनुपमत्व, अपारत्व, अमूर्तत्व और अनुदयत्व (अपरंपर के के पाँच गुण)ः निश्कलत्व, अनुतरत्व, अचलत्व, असंख्यत्व और अनाराध्यत्व (परंपद के पाँच गुण) : लीनता, पूर्णता, उन्मनी, लोलता और मूर्छता (निरंजन के गुण) : सत्यता, सहजता, समरसता, सावधानता और सर्वगतता (निरंजन के पाँच गुण)ः अक्ष्यता, अभेद्यता, अच्छेद्यता, अदाह्यता और अविनाशिता (परमात्मा के पाँच गुण) बताये गये है।[25] इस प्रकार अनादि पिण्ड की उत्पत्ति का निरूपण करते हुये आद्यपिण्ड के उत्पत्ति क्रम में नाथ मत में यह बताया गया है कि कारणीभूत अनादिपिण्ड से परमानंद, परमानंद से प्रबोध, प्रबोध से चिदुदय, चिदुदय से प्रकाश और प्रकाश से सोऽहंभाव का विकास होता है।[26] इन पाँचों में स्पन्द, हर्ष उत्साह, निष्पंद और नित्यसुखत्व रूप पाँच गुण परमानन्द के है। उदय, उल्लास, अवभास, विकास और प्रभा नामक पाँच

गुण प्रबोध के है। सद्भाव, विचार कर्तृत्व, ज्ञातृत्व औश्र स्वतंत्रता ये पाँच गुण चिदुदय के है। निर्विकारता, निष्कलता, निर्विकल्पता, समता और विश्रान्ति ये पाँच गुण प्रकाश के है तथा अहंता, अखण्डऐश्वर्य, स्वात्मता, विश्वानुभव सामर्थ्य और सर्वज्ञता ये पाँच गुण सोऽहम्भाव के है।[27] इनके पंचीकरण से उपर्युक्त 25 गुणों वाला आद्यपिण्ड उत्पन्न होता है।

आद्यपिण्ड से महाकाश, महाकाश से महावायु महावायु से महातेज, महातेज से महासलिल और फिर महासलिल से महापृथ्वी रूप महासाकारपिण्ड की उत्पत्ति होती है।[28] इनमें क्रमशः अवकाश, अच्छिद्रता, अस्पृश्यता, नीलवणता तथा शब्दवत्ता महाकाश के, संचार, चलन, स्पर्श, शोषण और धूम्रवर्णता महावयु के, दाहकता, पाचकता, उष्णता, प्रकाशत्व और रक्तवर्णता महातेज के, प्रवाह, तृप्तिकारकता, द्रवता, रसता और श्वेतवर्णता महासलिल के तथा स्थूलता, नानाकारता, कठिनता, गन्ध और पीतवर्णता महापृथ्वी के पाँच–पाँच गुण है अर्थात् कुल 25 गुण है।[29] इस क्रमिक विकास में महासाकारपिण्ड की आठ मूर्तियाँ बतायी गई है। ये आठो मूर्तियाँ शिव ही हैं। इनके नाम इस प्रकार है – शिव, शिव से भैरव, भैरव, से श्रीकण्ठ, श्रीकण्ठ से सदाशिव, सदाशिव से ईश्वर, ईश्वर से रूद्र, रूद्र से विष्णु और विष्णु से ब्रह्मा।[30] तदनन्तर ब्रह्मा से – उनके अवलोकन मात्र से, नर–नारी रूप प्रकृतिपिण्ड – भौतिकपिण्ड की उत्पत्ति हुई है। भूमि आदि स्थूलपंचभूतों से तद्‌तद्भूतों के पाँच–पाँच गुणों से युक्त 25 गुणों वाला भौतिक शरीर बनता है।[31] यहाँ मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त और चैतन्य इन पाँच को अन्तःकरण कहा गया है[32] तथा उनके अलग–अलग गुण भी बताये गये है।[33] इसीक्रम में तीन गुणों के साथ काल और जीव के भी पाँच–पाँच गुण बताये गये है।[34]

इसप्रकार यह भौतिक जगत् – दृष्यमान ब्रह्माण्ड और पिण्ड – शिव और उनकी स्परूपभूता अन्तर्निहित शक्ति का ही चिद्‌विलास है। अपनी अनन्त शक्ति से युक्त शिव तात्विक रूप में अपने पूर्ण आनन्दमय, अपरिवर्तनीय स्वरूप में रहते हुये भी विलास रूप में अपने को विभिन्न रूपों में प्रकट करते और भोगते है और इस प्रकार व्यावहारिक रूप में वे भोक्ता और भोग्य, स्रष्टा और सृष्टि, आधार और आधेय, आत्मा और शरीर, आत्मा और उसकी अभिव्यक्तियाँ आदि दोहरे रूपों में भासित होते है। वह कभी शक्ति को नहीं त्यागते और उनकी शक्ति कभी उनको नहीं छोड़ती। इस प्रकार शिव यद्यपि अपनी शक्ति के द्वारा शाश्वत रूप से अपने को समस्त रूपाकारों में व्यक्त करते है तथापि वे अनादिकाल से आत्मस्वरूप में अद्वैत, परिवर्तनरहित अभेदसत्ता निर्गुण ब्रह्म के रूप में रहते है।[35] वह शक्ति जो प्रापंचिक द्वैवताओं का आधार, कारण और पोषक है जब अपने मूलस्वतः प्रकाश शिव के पारमार्थिक स्वरूप में विराजती है तब शिव से पूर्ण तदाकार हो जाती है। इसप्रकार वह शिव के कुल (जागतिक) और अकुल (पारमार्थिक) दोनों रूपों का सामंजस्य और एकता प्रदर्शित करने वाली है।[36]

संदर्भ सूची

1. द्रष्टव्य – गोरखनाथ एण्ड द कनफटा योगीज, जार्ज वेस्टन ब्रिग्स, पृ0–150–151 तथा 125
2. द्रष्टव्य – गोरखदर्शन, अक्षय कुमार बनर्जी, पृ0सं0–33,34,35
3. द्रष्टव्य – गोरखनाथ – बस्ती न शून्यं, शुन्यं न बस्ती, अगम अगोचर ऐसा।
   गगन शिखर महि बालक बोलै, ताका नाव धरहु गे कैसा।।1।।
4. द्रष्टव्य – गोरखनाथ, पृ0सं0–43
5. द्रष्टव्य – गोरखवाणी, दोहा संख्या–1
6. द्रष्टव्य – भावभावविर्निमुक्तम् नाशोत्पत्ति विवरर्जितम्।
   सर्वसंकल्पनातीतम् परब्रह्म तदुच्यते।।
7. द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति 1/2
8. द्रष्टव्य – कुलंशक्तिरतिप्रोक्तम्
9. द्रष्टव्य – अकुलंशिवउच्चयते
10. द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति – यदानास्तिस्वयं कर्ता कारणं न कुलाकुलम्।
    अव्यक्तं च परमब्रह्म अनामा विद्यते तदा।। पृ0–3 पर उद्धत
11. द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ0–4
12. द्रष्टव्य – वही, पृ0–4 – तस्येच्छामात्रधर्मा धर्मिणीय निजाशक्ति प्रसिद्धा।
13. द्रष्टव्य – शिवस्याभन्यन्तरेशक्ति शक्तेरभ्यन्तरेशिवः।
    अन्तरंनैवजानन्ती चन्द्रचन्द्रिकयोरिव।।– नाथयोग, हजारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा उद्धत
14. द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धानत पद्धति, पृ0–4 –तस्योउनतूखमात्रेण परमशक्तिरूथिया।
15. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–4
16. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–4
17. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–4
18. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–5
19. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–6
20. द्रष्टव्य – निजाऽपरापरासूक्ष्मा कुण्डल्लिन्यासुपञ्चधा।
    शक्तिचक्रक्रमेणोंत्थों जातःपिण्डःपरःशिवः।।–वही, पृ0–6 पर उद्धत
21. द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ0सं0–6
22. द्रष्टव्य – गोरखदर्शन, अक्षय कुमार बनर्जी, पृ0सं0–
23. द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ0–7
24. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–7
25. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–7 से 9 तक
26. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–9
27. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–9
28. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–11
29. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–11–12
30. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–12
31. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–13
32. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–14
33. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–14–15
34. द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–15–16–17
35. द्रष्टव्य – गोरखदर्शन, अक्षय कुमार बनर्जी, पृ0–70
36. द्रष्टव्य – वही, पृ0–72